शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जुलाई 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

हिन्दी की महिला आत्मकथाकारों द्वारा अभिव्यक्त स्त्री-विमर्श

डॉ. हरिश्चन्द्र अग्रहरि
अतिथि विद्वान (हिन्दी)
शासकीय महाविद्यालय, जैतवारा
सतना, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

आत्मकथा विधा हिन्दी साहित्य की गद्य विधाओं में काफी चर्चित और अपने कलेवर में व्यापक रूप लिये हुए है। आत्मकथा में रचनाकार अपनी बीती हुई अनुभूतियों को इस तरह अभिव्यक्ति देता है कि उसमें उसके जीवन के सुखदुःख उतार-चढ़ाव जैसे सारे संघर्ष बड़ी सूक्ष्मता से व्यक्त हो जायें। वह इन संघर्षो को या उनसे उपजे अपने जीवन के अनुभवों को बेबाक वाणी देता है। पुरुष साहित्यकारों के सामन ही महिला साहित्यकारों ने भी अपने जीवन की घटनाओं को आत्मकथा के रूप में अभिव्यक्त किया है। भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं रही है। यदि महिला साहित्यकार अथवा लेखिका हो तो उसे स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए अनेक खतरे उठाना पड़ते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में महिला आत्मकथाकारों द्वारा अभिव्यक्त स्त्री-विमर्श की चर्चा की गयी है।

भूमिका

आत्मकथा आधुनिक साहित्य की जटिल और जोखिमों से भरी विधा है। आत्मकथा में जिन्दगी की आलोचनात्मक लेकिन सच की व्याख्या होती है। इसमें आत्ममंथन, आत्मालोचन और आत्मविश्लेषण किसी खास औचित्य और अर्थ प्रदान करने के लिए होती है। इसमें लोकोन्मुख, सहधर्मिता होती है। इसमें अन्तरंग का उद्घाटन होता है। आत्मकथा में व्यक्ति समूचे समय और समाज के संदर्भ में अपने शब्द और धर्म, अपनी वैचारिकता और व्यक्तित्व की गहन पारदर्शी पड़ताल करता है। चूंकि साहित्य आत्मा की ही अभिव्यक्ति है तो आत्मा की इस अप्रत्यक्ष और अर्मूत कल्पना जिसमें स्थिति, काल, घटना, चरित्र, भाव-विचार, मनोदशा आकर प्रत्यक्ष और मूर्त हो जाते हैं।

आलोचकों ने आत्मकथा के रचना तत्वों में आत्म तत्व, कथा तत्व और परिवेश को महत्वपूर्ण बतलाया है। 'किसी भी रचनाकार द्वारा स्वयं लिखित अपने जीवन का इतिहास आत्मकथा कहलाता है।' बनारसीदास की 'अर्द्धकथानक', महर्षि दयानंद की 'उपदेशमंजरी', अम्बिकादत्त व्यास की 'निजवृत्तांत से लेकर स्वतंत्र भारत में भवानी दयाल की 'प्रवासी की आत्मकथा', क्षुल्लक गणेशवर्णी की 'मेरी जीवन गाथा', देवेन्द्र सत्यार्थी की 'चांद सूरज के बीरन', सेठ गोविन्ददास की आत्मकथा, महात्मा भगवानदीन की 'जीवन झांकी', वृन्दालाल वर्मा, बलराज साहनी की 'यादों के झरोखों से' आत्मकथा लेखन की एक लम्बी श्रृंखला है, जिसमें डॉ. नगेन्द्र की 'अर्द्धसत्य' आदि आत्मकथाएँ हिन्दी साहित्य की शोभा बनीं। कालान्तर में महिला रचनाकारों द्वारा भी आत्मकथाओं का सृजन किया गया। जिसमें कुसुम अंसल की 'जो कहा नहीं गया' प्रकाशित हुई। इसी तरह नारी विमर्श को लेकर प्रभा खेतान, मन्नू भंडारी, मैत्रेयी पुष्पा, सुनीता

जैन, कृष्ण अग्निहोत्री और अमृता प्रीतम जैसी सुप्रसिद्ध महिला लेखिकाओं की आत्मकथाओं ने भी साहित्य में अपनी पहचान बनाई और इनके लेखन में नारी विमर्श की की नवीन सम्भावनायें देखी गयीं।

महिला आत्मकाथाओं में अभिव्यक्त स्त्री-विमर्श

हिन्दी में दुःखिनी बाला द्वारा रचित 'सरला : एक विधवा की जीवनी' प्रथम महिला आत्मकथा मानी गयी है। आत्मकथा साहित्य का विकास आधुनिक युग की उपलब्धि है। स्वातंत्र्योत्तर युग में आत्मकथा साहित्य अपने अभूतपूर्व रूप में प्रस्तुत हुआ है। विशेषकर पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था द्वारा नारी पर ढाये जाने वाले अत्याचार, विवाह संस्था की असंगतियों, पति द्वारा सताई स्त्री, आत्म विकास में बाधक अनेक परिस्थितियों से संघर्ष करती महिला कलम निर्भयता की प्राप्ति हेतु आत्मकथाओं का बुनियादी सहारा लेकर अपनी आत्मभिव्यक्ति को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

हिन्दी की इन महिला आत्मकथाकारों की आत्मकथाओं रसीदी टिकट, दोहरा अभिशाप, एक कहानी यह भी, अन्या से अनन्या, कस्तूरी कुण्डल बसे, गुड़िया भीतर गुड़िया में नारी विमर्श का सफलतम चित्रण हुआ है। ये आत्मकथाएँ व्यक्ति की स्फुटित चेतना का जायजा लेती हैं और स्त्री मुक्ति-संघर्ष को सर्वोपरि स्थान पर अग्रसित करने में सफल दिखलाई देती हैं। हिन्दी की इन महिला आत्मकथाकारों की आत्मकथाओं में 'कथ्य संघर्ष विविध स्वरूपों में चित्रित हुआ है जैसे - शोषण, अन्याय, लिंग भेद, दोयम दर्जे की नागरिकता, स्वाभिमान व अस्मिता की तलाश, वेदना की आत्मिक स्तर पर अनुभूति, यथास्थिति से बाहर निकलने की छटपटाहट, प्रतिशोध की आकांक्षा, संघर्ष के अन्य असामाजिक स्वरूप, सामाजिक व आर्थिक दवाब, समाज में महिलाओं की स्थिति, साहित्य में स्त्रियों का साहित्य, अन्य सवाल का अंकन है।'

महिला आत्मकथाओं के लेखन में सामाजिक यथार्थ तथा स्त्री जीवन के अखण्ड सत्य को प्रभावी रूप से चित्रित किया गया है। पुरूष का जामा आधुनिक है, पर संस्कार सीमित है। महिला लेखिकाओं ने यह बात खुलकर प्रकट की है। अपने जीवन की आपबीती के साथ समाज, राष्ट्र का भरपूर प्रयास किया है। इन सभी लेखिकाओं ने मात्र सच उद्घाटित किया है। जीवन में घटित समस्याओं की अभिव्यक्ति इनमें दिखाई देती है। स्त्री-विमर्श से प्रभावित लेखिकाओं ने कहानी, नाटक, उपन्यास, कविताएँ, आत्मकथा में कहानियों को एक नवीन रूप देकर आत्मकथा में पितृसत्तात्मक पारम्परिक रूढ़िवादी विचारों का विरोध करते हुए नारी स्वतन्त्रता की मांग को उठाया है। आज नारी पुरूष सत्तात्मक समाज में व्याप्त विषमता के विरूद्ध विद्रोह करते हुए अपनी देह-चेतना एवं अस्तित्व के गहरे विमर्श से कहीं आगे पूंजीवादी व्यवस्था एवं उपयोगी दृष्टि को बदलने के लिए प्रयत्नशील दिखाई पड़ती है। किसी भी सामाजिक व्यवस्था की एक कसौटी यह भी होती है कि इसके लिए मनुष्य के बहुआयामी विकास को किस सीमा तक उचित वातावरण एवं व्यवस्था गुणात्मक विकास की जबावदेही अपने स्तर पर संजोती है। इन आत्मकथाओं में आज की महिलाओं ने अपने अधिकारों को बड़ी गहनता से लिपिबद्ध किया है। अमृता प्रीतम, कौसल्या बैसंत्री, मन्नू भण्डारी, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा की कलम से निकले

प्रभावकारी लेखन को खासतौर पर आत्मकथा लेखन को गति मिली है।

स्त्री के प्रति समाज में पल रहे अनेकों दंश जैसे शोषण, लिंग भेद, प्रतिशोध, दोयम दर्जे की नागरिकता तथा अस्मिता स्वाभिमान की तलाश जैसी अनेकों यातनाएँ समाज में झेल रही स्त्री को शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, धार्मिक आदि परेशानियों का सामाजिक व्यवस्था ने प्रतिदिन नये-नये रूपों में प्रस्तुत किया है। महिला आत्मकथाकारों ने अपनी स्वयं की आत्मकथा में अपना समस्त जीवन चित्रित किया है। औरत की दूसरी नागरिकता एवं समाज के दोयम बर्ताव ने उन्हें भीतर ही भीतर बहुत तोड़ा है। सच तो यह है कि सामाजिक परिवेश एवं नवीन जीवन सन्दर्भों की उपज है यह महिला आत्मकथाकारों की अपनी विशेष रचनाएँ, जहाँ नारी जाति की तमाम मुश्किलों को अपनी स्वयं की आत्मकथा में चित्रित किया है। व्यक्तियों के समूह का नाम समाज है। समाज में स्त्री और पुरूष दो स्तंभ है। रथ के दो पहिये हैं।

सामाजिक विकास के लिए इन दोनों में परस्पर पूरकता होनी चाहिए थी, लेकिन पुरुष ने अपनी सत्ता के वर्चस्व में मुख्य रूप से धार्मिक और आर्थिक आडम्बरों से स्त्री को चारों ओर से जकड़ कर उसके स्त्रीत्व को ही अमान्य कर देने वाले कायदों पर ज्यादा षड़यंत्र किया। इससे स्त्री का बहुत शोषण हुआ और उस पर अन्याय भी बहुत हुये। इन शोषण और अन्यायों से स्त्री ने हार मानना स्वीकार नही किया। निरन्तर संघर्ष करते हुए अपना पक्ष मजबूत करने के लिए उसने एक लम्बी लड़ाई लड़ी और इसके लिए वह आज भी संघर्षरत है।

महिला आत्मकथाकारों ने अपनी जीवनगाथाओं में दैहिक, मानसिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक प्रत्येक दिशा में शोषण का विरोधी स्वर सृजित किया।

'मैं स्तंभित मुद्रा में खड़ी रही। मेरे समूचे तन-मन में सवाल ! गैबी, पता नही क्यों तो अपने होंठों की कोरों में ऐसी एक मुस्कान झुलाए रखता था, जिसका अनुवाद किया जाए, तो ही मतलब निकलता था-अप्रस्तुत और चतुर! अपने सवालों का कोई जवाब न पाकर मैंने गौर किया, मेरे कहे गए जुलमों में आक्रोश छलक उठा है।' 'अब तुम एक बेटी के पिता बन गए हो, जिस तरह का व्यवहार करोगे, उसी से समाज बनेगा। अपनी तरह का समाज बनाओ न।' 'माँ अछूत थी वह जानती थी माँ को बुरा लगता था परन्तु पैसे के लिए वह अपमान सह लेती थी। मजबूर थी, इसलिए।'

आज स्त्री के सामने बहुविध प्रकार की समस्याएं उसके केन्द्र में हैं। यथा सदस्यों में आपसी प्रेम का न होना, आपस में स्नेह सद्भाव, सहानुभूति, आत्मीयता की सुरक्षा न होना, वर्तमान समय संक्रांति काल होने की वजह से नई अर्थ व्यवस्था, भौतिकवादी प्रभाव, रोजगार की समस्या के साथ-साथ स्वामित्व की भावना, घरेलू झगड़े आदि के कारण इन आत्मकथाओं में पारिवारिक जीवन के विघटन की कहानियाँ चित्रित हैं। बढ़ती महंगाई, पाश्चात्य जीवन शैली का प्रभाव आदि के कारण भी स्त्री अपने स्वावलम्बन की ओर बढ़ रही है तब भी उसके साथ शोषण जुड़ा हुआ है। कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नही है दिल मेरा' में पति-पत्नी पर शोषण और अन्याय करता है, किन्तु उसे भोगने में उसका पूरा विश्वास है। 'और हो गई धुलाई। रूईसी धुनाई इसके बाद बलात्कार की पुर्नरावृत्ति। इसी तरह स्त्री के मन और बुद्धि पर पुरूष वर्चस्व की प्रबलता इतनी अधिक

है कि पुत्री जन्म पर घर की स्त्रियाँ ही सबसे अधिक दुखी होती हैं, और प्रत्येक स्थान पर बेटी के प्रति भेदभाव की स्थिति निर्मित करती है। 'यह एक घोर सत्य है कि शाब्दिक मकड़जाल के बावजूद स्त्रियाँ ऐसे घोर भेदभाव एवं अपमान की शिकार हैं जिसे देखकर लगता है कि हम इंसानियत से गिर गए है और भारत में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की यही वास्तविकता है।

समकालीन स्त्री लेखन में सर्वप्रथम स्त्री की अस्मिता, अस्तित्व स्वाभिमान जैसे महत्वपूर्ण तथ्यों को मुद्दा बनाकर लेखिकाओं ने आत्मविश्लेषण और आत्माभिव्यक्ति का संघर्ष को अपने लेखन के केंद्र में रखा है। दरअसल जड़ परम्पराओं मृतप्रायः रूढ़ियों सड़ी-गली मान्यताओं के खिलाफ उठी सामूहिकता प्रतिवाद ही स्त्री प्रतिरोध की मूल उत्स में विराजमान रहती है। समाज द्वारा निर्धारित भूमिकाओं से बाहर आकर स्वतंत्र रूप में महिला की अस्मिता को परिभाषित कर पाना इतना आसान नहीं है। डॉ. प्रज्ञा शुक्ला के अनुसार, 'नारीवाद एक विचारधारा या चिन्तन मात्र है जो स्त्रियों को उसकी परम्परागत भूमिका के विषय में पुनः सोचकर उसके स्वतंत्र अस्तित्व की पहचान स्थापित करने के लिए उसे एक नई दिशा प्रदान करता है।' समाज की दोहरी मानसिकता के कारण स्त्री के हृदय में एक क्षोभ की भावना पनपती है। क्योंकि अपने यथाशक्ति मिलने वाले सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, आदि कार्यो को महिलाएँ पूर्ण रूप प्रदान करती हैं किन्तु अपनी संघर्षशीलता का परिणाम उन्हें उपेक्षा की दृष्टि में रखता है। अपनों का हो या परायों का समाज का यह व्यवहार उनके लिए मौजूदा नीति के प्रति एक प्रकार की प्रतिशोध की भावना को ही जन्म देता है।

'वह दिन मेरे उदास दिनों की एक भयानक स्मृति है, जैसे भोर होने से पहले रात और काली हो जाती है। एक शाम दफ्तर के कमरे में बैठी हुई थी कि सज्जाद जहीर मिलने आए। कुछ देर दुविधा में चुप रहे, फिर संकोच भरे शब्दों में कहने लगे, भारतीय लेखकों का एक डेलीगेशन सोवियत रूस जा रहा है। मैं चाहता हूँ आप भी इस डेलीगेशन में हों। कल मीटिंग में पंजाबी लेखकों ने सख्त ऐतराज किया। अगर अमृता डेलीगेशन में होगी, तो हमारी पत्नियाँ हमे डेलीगेशन में नही जाने देंगी।'

समाज में प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं को पूर्णरूप देते हुए स्वयं को दुनिया का परिपूर्ण व्यक्ति बनाने का प्रयास करता रहता है। इसके अलावा प्रमुखतः स्त्री जाति को अधिकतर यही सिखाया जाता है कि उसका अपना घर नही, कभी पिता, पति, पुत्र इन तीन दहली जो में से एक भी दहलीज पर उसका स्वयं का कोई अधिकार नहीं होता है।

'नई ब्याही दहलीज चमकीले रथ में बैठकर अपनी जन्मभूमि से विंदा हो आई। यह दूसरी धरती, ससुराल का गाँव कैसा है, घूँघट की लम्बी झूल में से कैसे दिखे ? वर को देखे तो शायद पहचान न पाए। संसार का यह अंधकार उसे व्याह रूप में मिला है। हवा और धूप के लिए आत्मा भटकने लगी। कस्तूरी को बँधकर रहना है और मन छटपटाए तो उस आदमी के पांवो में सिर टेक देना है जो अब रोटी-कपड़ा देने वाला है।'

सैकड़ों वर्षो से समय की आवश्यकता और स्त्री पुरूष की क्षमताओं के अनुरूप जीवन के सभी कार्य भी समय के अनुसार पुरूष के वर्चस्व भरे स्त्री के प्राकृतिक व्यक्तित्व पर अपनी इच्छा के अनुकूल जो एक मुखौटा आरोपित कर दिया था,

उसी मुखौटे को स्त्री ने कालक्रम में स्वाभाविक मान लिया है।

सदी के संधिकाल के आगे-पीछे के दशकों में आए इस परिवर्तन को संभव बनाने में अनेक अन्य परिघटनाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्त्री लेखन के क्षेत्र में घटित हो रही इस नवीन परिघटना को रेखांकित करना ही महिला साहित्य का मुख्य उद्देश्य है। भारत में स्त्री चिंतन व लेखन की परम्परा नई नही है। यह सत्य है कि साहित्य को परिभाषित करने में लैंगिक अस्मिताओं की सत्ता की स्वीकार्यता नही रही लेकिन जब लिंग के आधार पर एक पक्ष इतना प्रबल हो कि उसकी रोशनी में दूसरा पक्ष अपने विस्तृत रूप में दिखाई नहीं पड़ता है।

निष्कर्ष

साहित्यकार मानवता को धर्म, जाति, उपजाति आदि में बांटकर एक को श्रेष्ठ और दूसरे को म्लेच्छ साबित करने की प्रवृत्ति को कभी भी स्वीकार नहीं करता। बल्कि लेखक भी उन सवालों को अपने लेखन में रखता हैं जो स्वयं उसके अस्तित्व को झकझोरते रहते हैं। यही झकझोरे हुए सवाल उसकी अपनी लेखनी में अनुभव बनकर बड़ी तीव्रता के साथ उतर आते है। इसी वास्तविकता को अगर हम परखना चाहें तो हिन्दी साहित्य में महिला आत्मकथाकारों की स्वयं की आत्मकथा को विशेषकर अध्ययन कर जीवन के संघर्ष को निकट से जाना जा सकता हैं। जिन्हें महिला आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथाओं में चित्रित किया है।

संदर्भ ग्रन्थ

1 हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ जय किशन खण्डेलवाल, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, 2014

2 साहित्यकारों की आत्मकथाओं में रचना प्रक्रिया, डॉ.. सुधा राठी, हरीश प्रकाशन, जोधपुर, 2009

3 मुझे घर ले चलो (आत्मकथा: खंड-5) तसलीमा नसरीन, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2007

4 कस्तूरी कुण्डल बसै, (रेमन जाह, जहाँ तोहि भावे), मैत्रेयी पुष्पा राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2014

5 दोहरा अभिशाप, कौसल्या बैसंत्री, परमेश्वरी प्रकाशन प्रीत बिहार दिल्ली, 2012

6 लगता नही है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, 1997

7 अस्तित्व विमर्श का स्त्री स्वर (आधुनिकता की पुनर्व्याख्या में संकलित), अर्चना वर्मा, वाणी प्रकाशन, 2001

8 रसीदी टिकट, अमृता प्रीतम, किताब घर प्रकाशन, 2012